

तस्मात्पुत्रि न युक्तैव साधुपीडा कदाचन। स्वर्गमोक्षफलप्राप्त्यै कर्तव्यं साधुसेवनम् ॥१००॥
 इति श्रुत्वा मुनेर्वाक्यं जगत्तापनिवारणम्। श्रीमद्वृषभसेना सा सदैराग्यपराभवत् ॥१०१॥
 ततश्च परलोकाय मोचयित्वा निजं मुदा। राजादीनां क्षमां कृत्वा भवक्लेशविनाशिनीम् ॥१०२॥
 दीक्षां गुणधराख्यस्य तस्य पार्श्वे सुखप्रदाम्। नत्वा मुनेः पदाम्भोजं संजग्राह विचक्षणा ॥१०३॥
 यथा वृषभसेना सा संजातौषधदानतः। सर्वौषधर्द्धिसम्पन्ना तथा तत्क्रियते बुधैः ॥१०४॥

गुणधरयतिनोक्तं यच्चरित्रं पवित्रं सकलभुवनसिद्धं तन्निशम्य प्रभव्याः।

जिनपतिकथितेऽस्मिन्सारधर्मे बभूवुः परमरुचिपरास्ते सा सती वः पुनातु ॥१०५॥

इति कथाकोशे सुपात्रौषधदानफलप्राप्तश्रीवृषभसेनाख्यानं समाप्तम्।

१११. शास्त्रदानफलप्राप्ताख्यानम्

नत्वा श्रीमज्जिनं देवं संसाराम्बुधितारणम्। वक्ष्येहं श्रुतदानस्योपाख्यानं सौख्यकारणम् ॥१॥
 भारतीं भुवनज्येष्ठां नमामि जिनसंभवाम्। अज्ञानपटलानां या सच्छलाका विनाशिनी ॥२॥

से ढक कर जो उन पर घोर उपसर्ग किया था, उससे तुझे इस जन्म में झूठा कलंक लगा। इसलिए बहिन, साधुओं को कभी कष्ट देना उचित नहीं किन्तु ये स्वर्ग या मोक्ष सुख की प्राप्ति के कारण हैं, इसलिए इनकी तो बड़ी भक्ति और श्रद्धा से सेवा-पूजा करनी चाहिए। मुनिराज द्वारा अपना पूर्वमत सुनकर वृषभसेना का वैराग्य और बढ़ गया। उसने फिर महल पर न जाकर अपने स्वामी से क्षमा कराई और संसार की सब माया-ममता का पेचीदा जाल तोड़कर परलोक-सिद्धि के लिए इन्हीं गुणधर मुनि द्वारा योग-दीक्षा ग्रहण कर ली। जिस प्रकार वृषभसेना ने औषधिदान देकर उसके फल से सर्वौषधि प्राप्त की उसी तरह और बुद्धिमानों को भी उचित है कि वे जिसे जिस दान की जरूरत समझें उसी के अनुसार सदा हर एक की व्यवस्था करते रहें। दान महान् पवित्र कार्य हैं और पुण्य का कारण है ॥८०-१०४॥

गुणधर मुनि के द्वारा वृषभसेना का पवित्र और प्रसिद्ध चरित्र सुनकर बहुत से भव्यजनों ने जैनधर्म को धारण किया, जिन को जैनधर्म के नाम तक से चिढ़ थी। वे भी उससे प्रेम करने लगे। इन भव्यजनों को तथा मुझे सती वृषभसेना पवित्र करें, हृदय में चिरकाल से स्थान से किए रोग, द्वेष, क्रोध, मान, माया, लोभ, ईर्ष्या, मत्सरता आदि दुर्गुणों को, जो आत्मप्राप्ति से दूर रखने वाले हैं, नाश करें उनकी जगह पवित्रता की प्रकाशमान ज्योति को जगावें ॥१०५॥

१११. शास्त्र-दान की कथा

संसार-समुद्र से पार करने वाले जिन भगवान् को नमस्कार कर सुख प्राप्ति की कारण शास्त्र-दान की कथा लिखी जाती है ॥१॥

मैं उस भारती सरस्वती को नमस्कार करता हूँ, जिसके प्रकटकर्ता जिनभगवान् हैं और जो आँखों के आड़े आने वाले, पदार्थों का ज्ञान न होने देने वाले अज्ञान-पटल को नाश करने वाली सलाई है।

मुनीनां जितमोहानां सद्रत्नत्रयशालिनाम्। पादपद्मानि सद्धानि पद्मायाः प्रणमाम्यहम् ॥३॥
 इति श्रीजिनवाग्देवीगुरुत्नत्वा प्रकथ्यते। शृण्वन्तु सुधियो भव्या ज्ञानदानकथानकम् ॥४॥
 यज्ज्ञानं सर्वजन्तूनां लोचनं परमोत्तमम्। तत्पात्राय महाभक्त्या दीयते किमतः परम् ॥५॥
 ज्ञानेन विमला कीर्तिज्ञानेन परमं सुखम्। ज्ञानेन भुक्तिमुक्ती च प्राप्यते तन्निषेवणात् ॥६॥
 सम्यग्ज्ञानं जिनेन्द्रोक्तं विरोधपरिवर्जितम्। सर्वथा भक्तितो नित्यं सेव्यं भव्यैः शुभश्रिये ॥७॥
 दानैर्मनैर्जगत्सारपूजनैः सप्रभावनैः। पठनैः पाठनैर्ज्ञानमाराध्य श्रीजिनोदितम् ॥८॥

भावार्थ—नेत्ररोग दूर करने के लिए जैसे सलाई द्वारा सूरमा लगाया जाता है या कोई सलाई ऐसी वस्तुओं की बनी होती है जिसके द्वारा सब नेत्र-रोग नष्ट हो जाते हैं, उसी तरह अज्ञानरूपी रोग को नष्ट करने के लिए सरस्वती-जिनवाणी सलाई का काम देने वाली है। इसकी सहायता से पदार्थों का ज्ञान बड़े सहज में हो जाता है ॥२॥

उन मुनिराजों को मैं नमस्कार करता हूँ, जो मोह को जीतने वाले हैं, रत्नत्रय-सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र से विभूषित हैं और जिनके चरण-कमल लक्ष्मी के-सब सुखों के स्थान हैं ॥३॥

इस प्रकार देव, गुरु और शास्त्र को नमस्कार कर शास्त्रदान करने वाले की कथा संक्षेप में यहाँ लिखी जाती है। जिससे कि इसे पढ़कर सत्पुरुषों के हृदय में ज्ञानदान की पवित्र भावना जागृत हो। ज्ञान जीवमात्र का सर्वोत्तम नेत्र है। जिसके यह नेत्र नहीं, उसके चर्म नेत्र होने पर भी वह अन्धा है, उसके जीवन का कुछ मूल्य नहीं होता। इसलिए अकिंचित्कर जीवन को मूल्यवान् बनाने के लिए ज्ञान-दान देना चाहिए। यह दान सब दानों का राजा है और दानों द्वारा थोड़े समय की और एक ही जीवन की ख्वाहिशें मिटेंगी, पर ज्ञान-दान से जन्म-जन्म की ख्वाहिशें मिटकर वह दाता और दान लेने वाला ये दोनों ही उस अनन्त स्थान को पहुँच जाते हैं, जहाँ ज्ञान के सिवा कुछ नहीं है, ज्ञान ही जिनका आत्मा हो जाता है। यह हुई परलोक की बात। इसके सिवा ज्ञानदान से इस लोक में भी दाता की निर्मल कीर्ति चारों ओर फैल जाती है। सारा संसार उसकी शत-मुख से बढ़ाई करता है। ऐसे लोग जहाँ जाते हैं। वहीं उनका मनमाना आदरमान होता है। इसलिए ज्ञान-दान भुक्ति और मुक्ति इन दोनों का ही देने वाला है। अतः भव्यजनों को उचित है—उनका कर्तव्य है कि वे स्वयं ज्ञान-दान करें और दूसरों को भी इस पवित्र मार्ग में आगे करें। इस ज्ञान-दान के सम्बन्ध में एक बात ध्यान देने की यह है कि यह सम्यक्त्वपने को लिए हुए हो अर्थात् ऐसा हो कि जिससे किसी जीव का अहित, बुरा न हो, जिसमें किसी तरह का विरोध या दोष न हो, क्योंकि कुछ लोग उसे भी ज्ञान बतलाते हैं, जिसमें जीवों की हिंसा को धर्म कहा गया है, धर्म के बहाने जीवों को अकल्याण का मार्ग बतलाया जाता है और जिसमें कहीं कुछ कहा गया है और कहीं कुछ कहा गया है जो परस्पर विरोधी है। ऐसा ज्ञान सच्चा ज्ञान नहीं

वाचनापृच्छनासारानुप्रेक्षाम्नायसंयुतैः। धर्मोपदेशनैश्चैवं पञ्चधा ज्ञानभावना ॥९॥
 कर्तव्या हि महाभयैः केवलज्ञानहेतवे। किमत्र बहुनोक्तेन जिनज्ञानं जगद्धितम् ॥१०॥
 अनेकैर्भव्यमुख्यैश्च ज्ञानदानं कृतं पुरा। तेषां नामान्यपि प्राणी वक्तुं लोकेऽत्र कः क्षमः ॥११॥
 कौण्डेशस्य महीभर्तुः प्रसिद्धा भुवनत्रये। या कथा ज्ञानदानस्य तामर्हत्सूत्रतो ब्रुवे ॥१२॥
 अथेह भरतक्षेत्रे जिनधर्मपवित्रिते। जातः कुरुमरिग्रामे गोपो गोविन्दनामभाक् ॥१३॥
 तेनैकदा महाटव्यां दृष्टं कोटरमध्यगम्। श्रीजैनं पुस्तकं पूतं पवित्रीकृतभूतलम् ॥१४॥
 तस्मादादाय सम्पूज्य भक्त्या दत्तं महात्मने। पद्मनन्दिमुनीन्द्राय वन्दिताय सुरेशिना ॥१५॥

किन्तु मिथ्याज्ञान है। इसलिए सच्चे-सम्यग्ज्ञान दान देने की आवश्यकता है। जीव अनादि से कर्मों के वश हुआ अज्ञानी बनकर अपने निज ज्ञानमय शुद्ध स्वरूप को भूल गया है और माया-ममता के पेंचीले जाल में फँस गया है, इसलिए प्रयत्न ऐसा होना चाहिए कि जिससे यह अपना वास्तविक स्वरूप प्राप्त कर सके। ऐसी दशा में इसे असुख का रास्ता बतलाना उचित नहीं है। सुख प्राप्त करने का सच्चा प्रयत्न सम्यग्ज्ञान है। इसलिए दान, मान पूजा-प्रभावना, पठन-पाठन आदि से इस सम्यग्ज्ञान की आराधना करना चाहिए। ज्ञान प्राप्त करने की पाँच भावनाएँ ये हैं-उन्हें सदा उपयोग में लाते रहना चाहिए। वे भावनाएँ हैं-

वाचना—पवित्र ग्रन्थ का स्वयं अध्ययन करना या दूसरे पुरुषों को कराना।

पृच्छना—किसी प्रकार के सन्देह को दूर करने के लिए परस्पर में पूछ-ताछ करना।

अनुप्रेक्षा—शास्त्रों में जो विषय पढ़ा हो या सुना हो उसका बार-बार मनन-चिन्तन करना।

आम्नाय—पाठ का शुद्ध पढ़ना या शुद्ध ही पढ़ाना और धर्मोपदेश-पवित्र धर्म का भव्यजन को उपदेश करना। ये पाँचों भावनाएँ ज्ञान बढ़ाने की कारण हैं। इसलिए इनके द्वारा सदा अपने ज्ञान की वृद्धि करते रहना चाहिए। ऐसा करते रहने से एक दिन वह आयेगा जब कि केवलज्ञान भी प्राप्त हो जाएगा। इसीलिए कहा गया है कि ज्ञान सर्वोत्तम दान है और यही संसार के जीवमात्र का हित करने वाला है। पुरा काल से जिन-जिन भव्य जनों ने ज्ञानदान किया आज तो उनके नाम मात्र का उल्लेख करना भी असंभव है, तब उनका चरित लिखना तो दूर रहा। अस्तु, कौण्डेश का चरित ज्ञानदान करने वालों में अधिक प्रसिद्ध है। इसलिए उसी का चरित संक्षेप में लिखा जाता है ॥४-१२॥

जिनधर्म के प्रचार या उपदेशादि से पवित्र हुए भारतवर्ष में कुरुमरी गाँव में गोविन्द नाम का एक ग्वाला रहता था। उसने एक बार जंगल में एक वृक्ष की कोटर में जैनधर्म का एक पवित्र ग्रन्थ देखा। उसे वह अपने घर पर ले आया और रोज-रोज उसकी पूजा करने लगा। एक दिन पद्मनन्दि नाम के महात्मा को गोविन्द ने जाते देखा। इसने वह ग्रन्थ इन मुनि को भेंट कर दिया ॥१३-१५॥

पूर्व तेनैव शास्त्रेण तत्राटव्यां जितेन्द्रियाः। पूर्वभट्टारकाः केचित्कृत्वा व्याख्यां जगद्धिताम् ॥१६॥
 कारयित्वा महापूजां भाक्तिकैः स्वर्गमोक्षदाम्। विधाय श्रीजिनेन्द्राणां सद्धर्मे च प्रभावनाम् ॥१७॥
 भव्यान्सम्बोध्य सन्मार्गं प्रकाशय श्रीजिनोदितम्। पुनस्तं कोटरे धृत्वा गतास्ते ध्वस्तकल्मषाः ॥१८॥
 बाल्यात्प्रभृति तेनैव गोविन्देन शुभप्रदा। तस्यैव पुस्तकस्योच्चैश्चक्रे पूजा सदा मुदा ॥१९॥
 एकदाथ स गोविन्दो यमव्यालेन भक्षितः। कः को न वंचितो लोके यमेन प्राणहारिणा ॥२०॥
 मृत्वा तत्रैव संजातः स निदानेन गोपकः। तेन पुण्येन संयुक्तो ग्रामकूटस्य नन्दनः ॥२१॥
 सुखेन वर्द्धितो नित्यं जनयन्प्रीतिमद्भुताम्। जनानां शुभपुण्येन सुभगो जनरंजनः ॥२२॥
 एकदासौ तमालोक्य पद्मनन्दिमुनीश्वरम्। जातो जातिस्मरो ज्ञात्वा पूर्वजन्मविचेष्टितम् ॥२३॥
 नत्वा तस्य पदाम्भोजं महाधर्मानुरागतः। दीक्षां जग्राह पूतात्मा परमानन्दनिर्भरः ॥२४॥
 कालेनैव तपस्तप्त्वा स गोविन्दचरो मुनिः। ततः प्राणान्त्यये जातः कौण्डेशो भूमिपस्तराम् ॥२५॥
 बालेन विजितारातिस्तेजसेव दिवाकरः। स्वरूपेणेव कन्दर्पः कान्त्या पूर्णेन्दुसन्निभः ॥२६॥
 महाविभवसम्पन्नो महासौभाग्यमण्डितः। महासौख्यनिवासोभूमहाकीर्तिविराजितः ॥२७॥

यह जान पड़ता है कि इस ग्रन्थ द्वारा पहले भी मुनियों ने यहाँ भव्यजनों को उपदेश किया है, इसके पूजा महोत्सव द्वारा जिनधर्म की प्रभावना की है और अनेक भव्यजनों को कल्याण मार्ग में लगाकर सच्चे मार्ग का प्रकाश किया है। अन्त में वे इस ग्रन्थ को इसी वृक्ष की कोटर में रखकर विहार कर गए हैं। उनके बाद जबसे गोविन्द ने इस ग्रन्थ को देखा तभी से वह इसकी भक्ति और श्रद्धा से निरन्तर पूजा किया करता था। इसी समय अचानक गोविन्द की मृत्यु हो गई वह निदान करके इसी कुरुमरी गाँव में गाँव के चौधरी के यहाँ लड़का हुआ। इसकी सुन्दरता देखकर लोगों की आँखें इस पर से हटती ही न थी, सब इससे बड़े प्रसन्न होते थे। लोगों के मन को प्रसन्न करना, उनकी अपने पर प्रीति होना यह सब पुण्य की महिमा है। इसके पल्ले में पूर्व जन्म का पुण्य था। इसलिए इसे ये सब बातें सुलभ थीं ॥१६-२२॥

एक दिन उसने उन्हीं पद्मनन्दि मुनि को देखा, जिन्हें कि इस गोविन्द ने ग्वाले के भव में ग्रन्थ भेंट किया था। उन्हें देखकर इसे जातिस्मरण हो गया। मुनि को नमस्कार कर सब धर्मप्रेम से उसने उनसे दीक्षा ग्रहण कर ली। इसकी प्रसन्नता का कुछ पार न रहा। यह बड़े उत्साह से तपस्या करने लगा। दिनों-दिन उसके हृदय की पवित्रता बढ़ती ही गई। आयु के अन्त में शान्ति से मृत्यु लाभ कर वह पुण्य के उदय से कौण्डेश नाम का राजा हुआ। कौण्डेश बड़ा ही वीर था। तेज में वह सूर्य से टक्कर लेता था। सुन्दरता उसकी इतनी बढ़ी-चढ़ी थी कि उसे देखकर कामदेव को भी नीचा मुँह कर लेना पड़ता था। उसकी स्वभाव-सिद्ध कान्ति को देखकर तो लज्जा के मारे बेचारे चन्द्रमा का हृदय ही काला पड़ जाता। शत्रु उसका नाम सुनकर काँपते थे। वह बड़ा ऐश्वर्यवान् था, भाग्यशाली था, यशस्वी था और सच्चा धर्मज्ञ था। वह अपनी प्रजा का शासन प्रेम और नीति के साथ करता था। अपनी सन्तान के माफिक ही उसका प्रजा पर प्रेम था। इस प्रकार बड़े ही सुख-शान्ति से उसका समय बीतता

भुञ्जानो विविधान्भोगान्पालयन्पुत्रवत्प्रजाः। चतुष्प्रकारजैनेन्द्रधर्मं कुर्वन्सुखं स्थितः ॥२८॥
 एवं काले गलत्युच्चैः पूर्वपुण्येन सौख्यतः। कदाचित्तोपि संवीक्ष्य कौण्डेशः कारणं महत् ॥२९॥
 निस्सारश्चैष संसारो भोगा रोगा इवापरे। अस्थिरा सम्पदा सर्वा चञ्चला भाति मोहिनी ॥३०॥
 शरीरं पलसन्दोहसंभृतं दुःखराशिदम्। बीभत्सु पूतिसंयुक्तं क्षणादेव परिक्षयि ॥३१॥
 इति ज्ञात्वा सुधीश्चित्ते जैनतत्त्वविदाम्बरः। महावैराग्यसंपन्नो राज्यं त्यक्त्वा त्रिधा द्रुतम् ॥३२॥
 कृत्वा पूजां जिनेन्द्राणां शर्मकोटिविधायिनीम्। नत्वा गुरुं तपो धृत्वा जिनोक्तं दोषवर्जितम् ॥३३॥
 संजातः पूर्वपुण्येन मुनीन्द्रः श्रुतकेवली। अहो भव्या न तच्चित्रं भवेद्ज्ञानेन केवली ॥३४॥
 यथासौ मुनिनाथोभूच्छ्रुतज्ञानविराजितः। ज्ञानदानान्तथा भव्यैः कर्तव्यं स्वात्मनो हितम् ॥३५॥
 ये भव्याः श्रीजिनाधीशज्ञानसेवां जगद्धिताम्। महाभक्त्या प्रकुर्वन्ति स्नपनैः पूजनैस्तथा ॥३६॥
 स्तवनैर्जपनैर्नित्यं पठनैः पाठनैः शुभैः। लिखनैर्लेखनैः पात्रैर्दानैर्नैर्विशेषतः ॥३७॥
 महाप्रभावनाङ्गैश्च सारसम्यक्त्वहेतुभिः। तेषां सुखानि भव्यानां भवन्त्येव सहस्रशः ॥३८॥
 धनं धान्यं कुलं गोत्रं पवित्रं चारुमङ्गलम्। कीर्तिः स्वायुर्महाज्ञानं विमलाः सर्वसम्पदाः ॥३९॥
 किमत्र बहुनोक्तेन सर्वे सारमनोरथाः। स्वर्गमोक्षप्रसौख्यानि प्राप्यन्ते ज्ञानसेवया ॥४०॥
 अष्टादश महादोषैर्मुक्तो जिननायकः। तदुक्तं वचनं नित्यं भावितं भवति श्रिये ॥४१॥

था ॥२३-२८॥

इस तरह कौण्डेश का बहुत समय बीत गया। एक दिन उसे कोई ऐसा कारण मिल गया कि जिससे उसे संसार से बड़ा वैराग्य हो गया। वह संसार को अस्थिर, विषयभोगों को रोग के समान, सम्पत्ति को बिजली की तरह चंचल-तत्काल देखते-देखते नष्ट होने वाली, शरीर को मांस, मल, रुधिर आदि महा अपवित्र वस्तुओं से भरा हुआ, दुःखों का देने वाला, धिनौना और नाश होने वाला जानकर सबसे उदासीन हो गया। इस जैनधर्म के रहस्य को जानने वाले कौण्डेश के हृदय में वैराग्य भावना की लहरें लहराने लगी। उसे अब घर में रहना कैद खाने के समान जान पड़ने लगा। वह राज्याधिकार पुत्र को सौंपकर जिनमन्दिर गया। वहाँ उसने जिन भगवान् की पूजा की, जो सब सुखों की कारण है। इसके बाद निर्ग्रन्थ गुरु को नमस्कार कर उनके पास वह दीक्षित हो गया। पूर्व जन्म में कौण्डेश ने जो दान किया था, उसके फल से वह थोड़े ही समय में श्रुतकेवली हो गया। वह श्रुतकेवली होना कोई आश्चर्य की बात नहीं है क्योंकि ज्ञानदान तो केवलज्ञान का भी कारण है। जिस प्रकार ज्ञान-दान से एक ग्वाला श्रुतज्ञानी हुआ उसी तरह अन्य भव्य पुरुषों को भी ज्ञान-दान देकर, अपना आत्महित करना चाहिए। जो भव्यजन संसार के हित करने वाले इस ज्ञान-दान की भक्तिपूर्वक पूजा-प्रभावना, पठन-पाठन लिखने-लिखाने, दान-मान, स्तवन-जपन आदि सम्यक्त्व के कारणों से आराधना किया करते हैं वे धन, जन, यश, ऐश्वर्य, उत्तम कुल, गोत्र, दीर्घायु आदि का मनचाहा सुख प्राप्त करते हैं। अधिक क्या कहा जाए किन्तु इसी ज्ञानदान द्वारा वे स्वर्ग या मोक्ष का सुख भी प्राप्त कर सकेंगे। अठारह दोष रहित जिन भगवान् के ज्ञान का मनन, चिन्तन करना उच्च

मयेति कथिता ज्ञान-वानस्यैषा कथा शुभा। अस्तु मे भवतां भव्या केवलज्ञानहेतवे ॥४२॥

गच्छे श्रीमति मूलसंघविमले सारस्वते सच्छुभे

श्रीभट्टारकमल्लिभूषणगुरू रत्नत्रयालंकृतः।

तच्छिष्येण कथा जिनेन्द्रकथिता श्रीज्ञानदानोद्भवा

भव्यानां भवशान्तये विरचिता भूयात्सदा शर्मदा ॥४३॥

इति कथाकोशे सुपात्रदत्तज्ञानदानफलप्राप्तकौण्डेशनृपाख्यानं समाप्तम्।

११२. अभयदानफलप्राप्ताख्यानम्

श्रीमत्पादद्वयं नत्वा जिनेन्द्रस्य शुभश्रिये। कथामभयदानस्य भक्त्यार्हत्सूत्रतो ब्रुवे ॥१॥

सरस्वती श्रिये मेस्तु भक्त्या भव्यशतार्चिता। महाश्रुताब्धिपाराय सतां या नौ मतल्लिका ॥२॥

स्मरामि शान्तये नित्यं मुनीनां ब्रह्मशालिनाम्। येषां सद्भक्तितो नूनं सन्मार्गः सुखतो नृणाम् ॥३॥

इत्याप्तगुणसंस्तोत्रमंगलेन मयाधुना। कथा वसतिदानस्य दृष्टान्तेन निगद्यते ॥४॥

अत्रैव भरतक्षेत्रे पवित्रे धर्मकर्मभिः। देशो मालवसंज्ञोभूमहाशोभाशतान्वितः ॥५॥

धनैर्धान्यैर्जनैर्नित्यं नानावस्तुसमुच्चयैः। भाति यः सम्पदासारैर्निवासो वा जगच्छ्रियः ॥६॥

सुख का कारण है ॥२९-४१॥

मैंने जो यह दान की कथा लिखी है वह आप लोगों को तथा मुझे केवलज्ञान के प्राप्त करने में सहायक हो ॥४२॥

मूलसंघ सरस्वती गच्छ में भट्टारक मल्लिभूषण हुए। वे रत्नत्रय से युक्त थे। उनके प्रिय शिष्य ब्रह्मनेमिदत्त ने यह ज्ञानदान की कथा लिखी है। यह निरन्तर आप लोगों के संसार की शान्ति करें अर्थात् जन्म, जरा, मरण मिटाकर अनन्त सुखमय मोक्ष प्राप्त कराये ॥४३॥

११२. अभयदान की कथा

मोक्ष की प्राप्ति के लिए भगवान् के चरणों को नमस्कार कर अभय-दान द्वारा फल प्राप्त करने वाली की कथा जैनग्रन्थों के अनुसार यहाँ संक्षेप में लिखी जाती है ॥१॥

भव्यजनों द्वारा भक्ति से पूजी जाने वाली सरस्वती श्रुतज्ञानरूपी महासमुद्र के पार पहुँचाने के लिए नाव की तरह मेरी सहायता करें। परब्रह्म स्वरूप आत्मा का निरन्तर ध्यान करने वाले उन योगियों को शान्ति के लिए मैं सदा याद करता हूँ, जिनकी केवल भक्ति से भव्यजन सन्मार्ग लाभ करते हैं, सुखी होते हैं। इस प्रकार मंगलमय जिनभगवान्, जिनवाणी और जैन योगियों का स्मरण कर मैं वसतिदान-अभयदान की कथा लिखता हूँ ॥२-४॥

धर्म-प्रचार, धर्मोपदेश, धर्म-क्रिया आदि द्वारा पवित्रता लाभ किए हुए भारतवर्ष में मालवा में बहुत काल से प्रसिद्ध और सुन्दर देश है। अपनी सर्वश्रेष्ठ सम्पदा और ऐश्वर्य से वह ऐसा जान